हमारे शहर की गलियाँ: दो

राजेश जोशी

अगर हम पैदल हों और कहीं पहुँचने की बहुत जल्दी हो
तो गलियाँ कई लम्बे रास्तों को बहुत छोटा बना देती थीं
यूँ उन गलियों का ऐसा जाल था सारे शहर में फैला हुआ
कि बिना सड़कों पर आये भी सारा शहर नापा जा सकता था
उन गलियों में भटकते हुए
उन गलियों से कई गलियाँ तो हमारे सपनों तक जाती थीं

गप्प मारने के लिए अपार फुरसत से भरी जगहें थीं उन गलियों में
दुकानों और घरों से बाहर निकले पटिये थे
जो रात गये जब सूने हो जाते थे
तो उन पर शतरंजें बिछ जाती थीं
रोशनी और अँधेरे के उन चैखानों पर आधी-आधी रात तक
खिकसते रहते थे स्याह और सफेद मोहरे
इन्हीं पटियों से निकला था वो प्रदेश का चैम्पियन रफीक
कहते हैं वो बाबू खाँ का चेला था
जिन्हें शुतुरघुन्ना मात देने में महारत हासिल थी

गलियों में चाय की कई छोटी-छोटी दुकानें थीं
दुकानों में अन्दर धँसे हुए कमरे थे
जिनमें एक या कभी कभी दो कैरम रखे होते थे
पीली मद्धिम रोशनी और सिगरेट के धुएँ से भरे इन कमरों में
कैरम के खिलाड़ी रात रात भर जमे रहते
बाहर आसमान के कैरम पर क्वीन के बाद
कवर के लिए बची आखरी सफेद गोट की तरह
रखा होता था चाँद

सड़कों के नाम अक्सर बेगमों और नवाबों के नाम पर थे
जबकि गलियों के नाम जिन लोगों के नाम पर थे

उनका कोई लिखित इतिहास नहीं था
काली धोबन की गली, शेख बत्ती की गली
नाइयों की गली, बाजे वालों की गली
गुलिया दाई की गली...
इस गली के एक किनारे पर जुम्मा पहलवान रहता था
जो हर साल दशहरे का रावण बनाता था
दूसरे किनारे पर खुशीलाल वैद्य का मकान था
जिनका एक लड़का पिछले दिनों इस देश का राष्ट्रपति बन गया था

चाँद जब जामा मस्जिद की गुम्बदों से ऊपर चढ़ने लगता
इन गलियों के रहस्य गहराने लगते

तंगहाली के दिनों में भी गलियों ने कभी
हमें शर्मिन्दा नहीं किया
दंगों के बीच अपने घरों तक पहुँचने के रास्ते दिये उन्होंने हमें
उन्हीं के बनिस्बत शहर कभी बेगाना नहीं लगा हमें !

.....